मोक्ष-चिन्तन एवं नीति विचार : छान्दोग्योपनिषद् के संदर्भ में

Dr. Nayana C. Patel
Associate Professor in Sanskrit
Smt. B. V. Dhanak College,
Bagasara

वेद के चार भाग दृष्टिगत होते हैं-संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद्। उपनिषद् वेद का अन्तिम भाग है। इसी कारण से उसे वेदान्त भी कहा जाता है। उपनिषद् का शाब्दिक अर्थ 'समीप बैठना' होता है अर्थात् गुरु के समीप बैठकर शिष्य द्वारा प्राप्त किया जाने वाला ज्ञान ही उपनिषद् कहलाता है। वेद का ज्ञानकाण्ड होने के नाते उसे ब्रह्म विद्या भी कहा जाता है। शंकराचार्य उपनिषद् का अर्थ विद्या द्वारा अविद्या का विनाश बताते हैं। उपनिषदों की वास्तविक संख्या कितनी थी, इसकी ठीक-ठीक जानकारी उपलब्ध नहीं है; फिर भी 'उपनिषद्-वाक्य-महाकोष' में 223 उपनिषदों की नामावली दी गई है। आज उनमें से कुछ ही उपनिषदें प्राप्त होती हैं। मुख्य उपनिषदों की संख्या 10 बताई जाती है। शंकराचार्य मुख्य उपनिषदों की संख्या 11 निर्धारित करते हैं, उसमें छान्दोग्योपनिषद् का विशेष स्थान है।

छान्दोग्योपनिषद् सामवेद के ताण्ड्य महाब्राह्मण के अंतर्गत है। पं० शिवशंकर शर्मा उसके मूल स्रोत के सम्बन्ध में लिखते हैं-

छान्दोग्योपनिषच्छ्रेष्ठा, ताण्ड्यब्राह्मणनिःसृता।

अष्टौ प्रपाठकाः खण्डाः समुद्भूतयुताः ॥[1]

इसी को साम ब्राह्मण, प्रौढ ब्राह्मण, पंचविंशब्राह्मण भी कहते हैं। श्रीमदाचार्य श्री दयानन्द सरस्वती जी ने इसी ताण्ड्यमहाब्राह्मण को सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि और ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में साम ब्राह्मण के नाम से लिखा है। विद्वान लोग कहते हैं कि ताण्ड्यमहाब्राह्मण प्रथमतः 40 अध्यायों में विभक्त है। प्रथम 25 अध्यायों को पंचविंशब्राह्मण कहते हैं, क्योंकि इसमें 25 अध्याय हैं। द्वितीय-पाँच अध्यायों का एक ग्रन्थ जो षड्विंश ब्राह्मण के नाम से विख्यात है। इसी ब्राह्मण के अन्तिम अध्याय का नाम अद्भुदब्राह्मण अथवा महाऽद्भुत ब्राह्मण है, तृतीय-8 अध्यायों को छान्दोग्योपनिषद् कहते हैं। चतुर्थ-अंतिम 2 अध्याय मंत्र ब्राह्मण नाम से विख्यात हैं।[2]

छान्दोग्य शब्दार्थ :

छान्दोग्योपनिषद् शब्द का अर्थ है, छन्दोगों की उपनिषद्। 'छन्दस्' शब्द के सामान्यतः तीन अर्थ होते हैं- वेद, वृत्त और वृत्तशास्त्र। कुछ विद्वान सामवेद अर्थ कहते हैं। 'छन्दोग' शब्द का अर्थ है-छन्दस् अथवा साम गाने वाला, 'वेदों में मैं साम हूँ।'[3] यह श्रीमद् भगवद्गीता की प्रशस्ति है। डॉ.राधाकृष्णन कहते हैं कि साम के गान-सौष्ठव के कारण भगवान ने साम को मुख्य कहा था। छन्दोगपद का विग्रह है- 'छन्दः साम गायतीति छन्दोगः' / वेदांगभूत छन्दस् वैदिक वृत्तशास्त्र है। ऋक् सर्वानुक्रमणी (2/6) में छन्दस् को अक्षर परिणाम कहा गया है। आप्टे जी के अनुसार 'छन्दोगः सामवेदाध्यायी' ऐसा अर्थ उद्धृत है।[4] शंकराचार्य अपने भाष्य में 'स्वर्गो वै लोकः साम वेद' कहा है।[5] पुरुष सूक्त के एक मन्त्र में कहा गया है-

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत-ऋचः सामानि जज्ञिरे छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।[6]

सर्वहुत यज्ञ से वेद उत्पन्न हुए जिनके नाम हैं- ऋक्, साम, यजुस्। चतुर्थ को छन्दस् इस सामान्य पद से सूचित किया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि छान्दोग्य सामवेदियों की उपनिषद् है।

छान्दोग्योपनिषद् का वर्ण्यविषय :

उपनिषद् वाङ्मय में छान्दोग्योपनिषद् का अनूठा स्थान है। इसकी गणना प्राचीन उपनिषदों में की जाती है। इसमें सांख्य, न्याय तथा बौद्ध दर्शनों के बीज विद्यमान हैं। विषय की गहनता की दृष्टि से उपनिषदों में इसका प्रथम स्थान है, परन्तु कार्य-परिमाण की दृष्टि से इसका स्थान बृहदारण्यक के पश्चात् आता है। छान्दोग्योपनिषद् में आठ प्रपाठक हैं और प्रत्येक प्रपाठक में अनेक खण्ड हैं। प्रथम प्रपाठक में तेरह खण्ड, द्वितीय में चौबीस, तृतीय में

उन्नीस, चतुर्थ में सत्रह, पंचम में चौबीस, षष्ठ में सोलह, सप्तम में छब्बीस और अष्टम में पन्द्रह खण्ड हैं।

छान्दोग्योपनिषद् के प्रथम प्रपाठक में विभिन्न विद्याओं, साम और ॐकार के स्वरूप का विवेचन; दूसरे में 'शैव उद्गीथ', तीसरे में देवमधु के रूप में सूर्योपासना, गायत्री वर्णन और आंङ्गिरस द्वारा श्रीकृष्ण को अध्यात्म शिक्षा और अन्त में अण्ड से सूर्य जन्म का वर्णन है। 'सर्व खल्विदं ब्रह्मा' इसी अध्याय की धरोहर है। चतुर्थ प्रपाठक में रैक्व के दार्शनिक तथ्य और सत्यकाम-जाबाल कथा का विस्तृत वर्णन है। पाँचवे प्रपाठक में प्रवाहण जैबलि के दार्शनिक सिद्धांत और केकय अश्वपति के सृष्टि सम्बन्धी तथ्य विशद रूप से वर्णित हैं। छठे प्रपाठक में आरूणि की दार्शनिकता का अत्यन्त रोचक और तर्कपूर्ण विवेचन है। 'तत्त्वमसि' आरूणि की अध्यात्म शिक्षा का पाठस्थानीय मन्त्र है। सातवें प्रपाठक में सनत्कुमार और नारद का विख्यात वृतांत है। इस उपदेश का पर्यवसान "यो वै भूमा तदमृतम्ः अथ यदल्पं तन्मर्त्यम् ॥" मन्त्र से होती है। इसी कारण इसे भूमा-दर्शन भी कहते हैं। अन्तिम प्रपाठक में इन्द्र-विरोचन आख्यान और आत्मावगति के व्यावहारिक उपायों का निदर्शन है।

छान्दोग्योपनिषद् में मोक्ष-चिन्तन :

मोक्ष शब्द 'मुञ्च' मोक्षणे अथवा 'मुच्' प्रमोचने च धातु से घञ् प्रत्यय करने पर 'मोक्ष' शब्द निष्पन्न होता है। इस प्रकार मोक्ष शब्द के दो अर्थ सिद्ध होते हैं, प्रथम काया के बन्धनों से छुटकारा द्वितीय परमानन्द की प्राप्ति । द्वितीय अर्थ मोक्ष की भावात्मक सत्ता का द्योतक है। अमरकोष में मोक्ष के मुक्ति, कैवल्य, निर्वाण आदि 8 नाम बताये गए हैं।[7] सामान्यतः शास्त्रों की दृष्टि से इसका अर्थ है-जीवात्मा का जन्म-मरण बन्धनों से मुक्त होना । उपनिषद् एवं आध्यात्मिक शास्त्रों में मोक्ष, मुक्ति, अपवर्ग, निःश्रेयस, निर्वाण, कैवल्य, ब्रह्मलोक, शाश्वत सुख, शाश्वत शान्ति, निवृत्ति आदि शब्द मोक्ष के लिए ही प्रयुक्त हुए हैं। गीता में इसी को परमधाम के नाम से अभिहित किया गया है, जिसको प्राप्त करके कोई प्रत्यावर्तन नहीं करता, अर्थात् जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है। सांख्यदर्शन के अनुसार आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक इन तीनों प्रकार के दुःखों से छुटकारा पाना मोक्ष है।[8] मोक्ष को भारतीय दर्शन में परम पुरुषार्थ की संज्ञा दी गई है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सभी पुरुषार्थ है। इनमें से किसी एक की प्राप्ति के लिए विवेकी मानव कोई कार्य करता है।

औपनिषदिक ज्ञान में मोक्ष को प्रमुखता प्रदान की गई है। उपनिषदों के पर्यवेक्षण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपनिषदों का चरम लक्ष्य आत्मा की अपरोक्षानुभूति कराकर स्वराज्य की प्राप्ति कराना है। छान्दोग्योपनिषद् में मोक्ष की भावात्मक सत्ता का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि मुक्त जीव प्रभु को प्राप्त कर दिव्य नेत्र और मन द्वारा कामनाओं को देखता हुआ रमण करता है। दिव्यता को प्राप्त जो देवरूप जीव परमात्मा की उपासना द्वारा इस अवस्था को प्राप्त करते हैं, वे सभी लोकों और कामनाओं को प्राप्त करते हैं।[9] छान्दोग्योपनिषद् में मुक्तात्मा को उत्तम पुरुष की संज्ञा देते हुए कहा गया है कि-यह प्रसन्न आत्मा इस शरीर से निकलकर परमज्योति एवं परमधाम को प्राप्त करके अपने परमशुद्ध स्वरूप से प्रकट होता है। यह मुक्तात्मा उत्तम पुरुष है। आत्मा वहाँ मुक्ति में रहता है।[10]

छान्दोग्योपनिषद् के विभिन्न आख्यानों में मोक्ष-चिन्तन प्रस्तुत हुआ है। प्रजापति इन्द्र को मोक्ष की शिक्षा देते हुए कहते हैं-यह भौतिक देह मरणधर्मा है। यह मृत्यु से ग्रसित है। यह शरीर अविनाशी, नित्य, सूक्ष्म तथा चेतन आत्मा का आश्रय स्थान है। सशरीर आत्मा प्रियाप्रिय सुख-दुःख से ग्रस्त है। जब तक शरीर है, तब तक दुःख लगे रहते हैं। आत्मा के अशरीर होने पर सुख-दुःख स्पर्श नहीं करते।[11] घोर अङ्गिरस द्वारा देवकी पुत्र श्रीकृष्ण को मुक्ति का उपदेश दिया गया है। घोर ऋषि का कहना है कि मनुष्य अन्त समय में तीन महावाक्यों को धारण करे-

(1) 'अक्षितमसि' अर्थात् मेरे आत्मा तू अखण्ड है।

(2) 'अच्युतमसि' अर्थात् तू अविनाशी है।

(3) 'प्राणसंशितमसि' अर्थात् तू सूक्ष्म प्राणपद है।[12]

उद्दालक आरूणि द्वारा अपने पुत्र श्वेतकेतु को 'तत् त्वम् असि' के रूप में तथा शाण्डिल्य ऋषि ने

'सर्वखल्विदं ब्रह्म' के रूप में मोक्ष या मुक्ति का उपदेश दिया है।

छान्दोग्योपनिषद् में नीति विचार :

भारतीय संस्कृति अपनी मौलिक चिन्तन प्रणाली के लिए विश्व विख्यात है। आध्यात्मिक क्षेत्र में अपनी मान्यताएँ और वैचारिक विविधता के कारण उसकी अपनी नीजी पहचान है। यहाँ अन्य बातों को छोड़कर 'नीति' विषयक विचारों को छान्दोग्योपनिषद् के परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास किया गया है।

'नीति' शब्द की निष्पत्ति 'नी' धातु से 'क्तिन्' प्रत्यय करने से हुई है। 'नी' धातु का अर्थ है ले जाना (प्रापण) और 'ति' प्रत्यय का क्रिया, करण अथवा कर्ता है। इस प्रकार 'नीति' का अर्थ प्रतिध्वनित होता है- मार्गदर्शन या मार्गदर्शक अथवा निर्देश या निर्देशक। इस प्रकार जो सिद्धांत, चिन्तन या विचार मनुष्य का मार्गदर्शन करे, उसे 'नीति' कहा जाता है। संपूर्ण जीवन को परिचालित करने वाले विचार, चिन्तन या सिद्धांत 'नीति' के नाम से जाने जाते हैं। कभी-कभी 'नीति' के स्थान पर 'नय' शब्द का प्रयोग भी होता है, जिसका भी वही अर्थ है। डॉ० भीखनलाल आत्रेय नीति-शास्त्र की परिभाषा देते हुए कहते हैं-"वे नियम, जिन पर चलने से मनुष्य का ऐहिक, आमुष्मिक (अलौकिक, दिव्य) और सनातन कल्याण हो, समाज में स्थिरता और सन्तुलन रहे, सब प्रकार से अभ्युदय हो और विश्व में शान्ति रहे, अर्थात् जिन नियमों के पालन करने से व्यक्ति और समाज दोनों का ही श्रेय हो।[13] उपनिपदों के नीतिविषयक विचारों का दोहन करते हुए डॉ० राधाकृष्णन कहते हैं कि उपनिषदें नैतिक जीवन के आन्तरिक स्वरूप पर बल देती हैं और आचरण के प्रेरक भाव को अधिक महत्त्व देती हैं। आभ्यन्तर पवित्रता बाह्य क्रियाकलापों एवं लक्षणों की अपेक्षा अधिक महत्त्व रखती है। उपनिषदें केवल यही आदेश नहीं देती कि 'चोरी मत करो', 'किसी की हत्या मत करो', बल्कि वे यह घोषणा भी करती हैं कि 'लोभ मत करो', अथवा 'किसी से घृणा मत करो एवं क्रोध, दुर्भावना तथा लालच के वशीभूत मत होओ।'[14] इस तरह का नीति-विषयक ज्ञान उपनिषदों में विपुल मात्रा में विवेचित है।

छान्दोग्योपनिषद् धर्म और नीति का उदात्त रूप प्रस्तुत करती है। इसमें स्थान-स्थान पर नैतिकता और सदाचार का उपदेश है, जो मानव को स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर अग्रसर करता हुआ, उस श्रेष्ठतम और सूक्ष्मतम ब्रह्म की प्राप्ति के योग्य बनाता है। यह उपनिषद् मानवीय उत्कर्ष का निर्देश भी देती है। छान्दोग्योपनिषद् में धर्म और नीति का समन्वय साधा गया है। यहाँ निर्देश है कि धर्म के अंतर्गत हमें यज्ञ, अध्ययन और दान को प्रथमतः महत्त्व देना चाहिए। तप को द्वितीय तथा ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए जीवनपर्यन्त आचार्य कुल में वास करने को तृतीय स्थान दिया गया है। तप, दान, आर्जव, अहिंसा और सत्य को जीवनयज्ञ की दक्षिणाएँ कहा है।[15] अभिप्रेत अर्थ यह है कि मानवजीवन का साफल्य और सम्पूर्णता तभी है, जब उसके द्वारा उपर्युक्त गुणों का जीवन में पूर्णरूपेण पालन किया जाए। छान्दोग्योपनिषद् में विद्यादान को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। पाँचवे अध्याय में उल्लेख है कि जो उपासक ग्राम में रहते हुए इष्ट (अग्निहोत्र), आपूर्त (धर्मशाला, उद्यान आदि) तथा दान करते हैं, वे पितृलोक को प्राप्त करते हैं।[16]

तप मानवजीवन का प्रमुख अंग है। तप के आचरण से ही मनुष्य देवत्व को प्राप्त करता है। शरीर तथा मन को दृढ़ निष्ठा से धर्म की ओर लगाने का नाम तप है। इस उपनिषद् अनुसार तप के आश्रित होकर ही प्रजापति ने लोक-लोकान्तरों को प्रकाशित किया है। शंकराचार्य ने तप का अर्थ 'च्छ्राचान्द्रायणादि' किया है तथा इसे वानप्रस्थ और परिव्राजक का धर्म कहा है। इनके अनुसार परिव्राजक के ज्ञान, यम और नियम तप ही है।[17] ब्रह्मचर्य आश्रम व्यवस्था का अंग होकर तो समाज से सम्बद्ध है, परन्तु मन, वचन और कर्म में ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना धर्म का अंग है। इसकी महत्ता इन्द्रिय संयम की भावना से है। ब्रह्मचर्य आत्मतत्त्व के ज्ञान में सहायक है। आत्मज्ञान की प्राप्ति अर्थ विरोचन ने 32 वर्ष तथा इन्द्र ने 101 वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया था।[18] तात्पर्य यह है कि यद्यपि यज्ञ, इष्ट, तप आदि अनेक साधन ब्रह्म प्राप्ति में कहे गये हैं, परन्तु वे सब ब्रह्मचर्य के द्वारा ही साध्य हैं। छान्दोग्योपनिषद् में उपदेशात्मक दृष्टि से कहा है कि 'अहिंसन् सर्व भूतान्यन्यत्र तीर्थेभ्यः' अर्थात् प्राणियों की हिंसा वर्जित है। वस्तुतः प्राणियों की हिंसा की बात तो दूर

रही, अपितु वाङ् मात्र से कटुभाषण करने तक को हत्या के सदृश माना गया है। यह उपनिषद् हमें बताती है कि सत्य ब्रह्मस्वरूप हैं, उसका अच्छी प्रकार जीवन में आचरण करने वाला ब्रह्म हो जाता है। और आगे कहा गया है कि 'सोने की चोरी करने वाला, सुरापान करने वाला, ब्रह्मवेत्ताओं का हनन करने वाला, गुरुस्त्रीगामी तथा जो इन चारों के साथ आचरण करता है, वह पापी होता है।[19] कुलमिलाकर बात यह है कि मानवजीवन बेशकीमती है और उसे नीतिमार्ग के आचरण से ही सजाया-सँवारा जा सकता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि छान्दोग्योपनिषद् सामवेदीय तलवकार ब्राह्मण के अंतर्गत है। इसकी वर्णनशैली अत्यन्त क्रमबद्ध और युक्तियुक्त है। प्रस्तुत उपनिषद् में बहुत से उपयोगी विषय हैं, इसी कारण से प्राचीन काल से ही इसका अत्यधिक मान-सम्मान रहा है। इसका ज्ञानकाण्ड तो सविशेष महत्त्वपूर्ण है। इसे जिज्ञासुओं की अक्षय नीधि माना गया है। 'सर्व खल्विदं ब्रह्म' और 'तत्त्वमसि' जैसे वाक्य छान्दोग्योपनिषद् के प्राण हैं। अवश्य ही छान्दोग्योपनिषद् का मोक्ष-चिंतन और नीति विषयक विचार मानवजीवन के लिए पथप्रदर्शक बन सकते हैं।

संदर्भ सूची :

1. छा० उप० पं० शिवशंकर शर्मा कृत भाष्य, पृ. 10
2. वही, भूमिका से, पृ. 11
3. वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः। इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ।। श्रीमद् भगवद्गीता, 10/22
4. आप्टे, वामन शिवराम, संस्कृत-हिन्दी कोश, रचना प्रकाशन जयपुर, सन् 2008 ई., पृ. 389
5. छान्दोग्योपनिषद् सानुवाद शाङ्करभाष्यसहित, (सोलहवाँ पुनर्मुद्रण 2000), पृ. 87
6. ऋग्वेद 10/90/9
7. मुक्तिःकैवल्यनिर्वाण श्रेयो निःश्रेयसामृतम् मोक्षेऽपवर्गः । अमरकोष, 1/5/6/7
8. अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्त पुरुषार्थः । सां० का० 1/1
9. छा० उप० 8/12/5-6
10. छा० उप० 8/12/3
11. छा० उप० 8/12/1
12. छा० उप० 3/17/6
13. शास्त्री, शुकदेव : भारतीय नीतिदर्शन से उद्धृत, हंसा प्रकाशन जयपुर, संस्करण 1997, पृ. 21
14. डॉ० राधाकृष्णन : भारतीय दर्शन खण्ड-1, राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली, संस्करण सन् 2012 ई., पृ. 175
15. अथ यत्तपो दानमार्जवमहिंसा सत्यवचनमिति ता अस्य दक्षिणा । छा० उप० 3/17/4
16. अथ य इमे ग्राम इष्टापूर्त दत्तमित्युपासते ते। छा० उप० 5/10/3
17. तप एवं द्वितीयस्तप इति च्छूचान्द्रायणादि-परिव्राजकस्यापि ज्ञानं यमा नियमाश्य तप एवेति... । छा० उप० 2/23/1 पर शांकर भाष्य
18. छा० उप० 8/7/3/ से 8/11/3 तक
19. छा० उप० 5/10/9 व 8/3/5